IInd Chapter

SOCIOLOGY
Part-I (Paper-I)
Social Stratification
सामाजिक स्वरीकरण

जातिव्यवस्था भारतीय समाज की एक अनोखी संस्था है और जाति व्यवस्था को समझे बिना हिन्दू सामाजिक व्यवस्था को नहीं समझा जा सकता है। एम. एन. श्री निवास का कहना है कि जाति भारतीय सामाजिक संरचना की सबसे महत्वपूर्ण इकाई है लेकिन जाति का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है पहला वर्ण के अर्थ में जो परम्परागत ढंग से भारतीय समाज को ब्राहमण, क्षत्रीय, वैश्य, शूद्र और पांचवा अछूत जो कि इन श्रेणियों में शामिल नहीं है, बाँटती है और दूसरा जाति का प्रयोग जाति के अर्थ में किया जाता है जिसका संबंध अन्तर्विवाही समूह से है जो न केवल हिन्दुओ बल्कि भारतीय मुसलमान, सिख, ईसाई आदि में भी पाया जाता है।

योगेन्द्र सिंह का भी कहना है कि जाति व्यवस्था के विश्लेषण में हमे सैद्धान्तिक स्वरूपों एवं वास्तविक प्रक्रियाओ के बीच अंतर स्थापित कर लेना चाहिए। सैद्धान्तिक रूप में जाति व्यवस्था की जड़ समाज के वर्ण विभाजन में जमी हुई है जहाँ ब्राहमण, क्षत्रीय, वैश्य शूद्र आदि का विभाजन है। स्पष्टतः वर्ण प्रारूप वृहत संरचना की प्रकृति का है पर वास्तविक स्तर पर देखे तो यह वर्ण प्रारूप राष्ट्रीय स्तर पर काम नहीं करता है है, क्योंकि जाति एक क्षेत्रीय घटना है जो (Micro Nature) सूक्ष्म प्रकृतिका है। आगे योगेन्द्र सिंह ने स्पष्ट शब्दो में कहा है कि हमें जाति को क्षेत्रीय घटना मान कर एक अर्न्त

विवाही समूह के रूप मे इसका विश्लेषण करना चाहिए। स्पष्टत: जाति एक ऐसा सामाजिक समूह है जिसमे पदस्थिति का निर्धारण जन्म के आधार पर होता है, जाति के सदस्य अपने वंशानुगत पेशा को अपनाते है तथा जाति मे खान पान तथा सा० सहवास तथा पेशा और विवाही संबंधी अपने नियम पाये जाते है। wester marck के अनुसार अन्त विवाह जाति व्यवस्था का सार तत्व रहा है। इसके अलावे मध्यम जातियो की एक जाति पंचायत रही है जिसका मुख्य उद्देश्य जातीय नियमो की रक्षा करना और जातीय नियम तोड़ने वाले को दंडित करना रहा है।

विदेशी लेखको ने भारतीय सामाजिक को जाति पर आधारित कठोर बंद्द सीमाओ मे बंटा हुआ समाज माना है, पर विदेशी लेखको का ऐसा विचार पूर्णत निराधार है। जाति व्यवस्था मे परिवर्तन हमे आरम्भिक दिनो से ही देखने को मिलता है। पूर्व छठी शताब्दी मे बौद्ध एवं जैन धर्मो का विकास हुआ जिसने जाति वयवस्था की जोड़ पर गहरा आघात किया। बाद मे भक्ति आन्दोलन के नेताओ जैसे गुजरात मे बल्लव-भाईचार्य बंगाल मे चैतन्य महाप्रभु, उतर भारत मे सूरदास एवं तुलसी आदि महात्माओ एवं संतो ने जातिवयवस्था के विरुद्ध शिक्षा दी और नारे लगाये। जाति व्यवस्था को मुस्लिम और इसाई धर्मो ने भी झकझोड़ा और अनेको परिवर्तन लाने का प्रयास किया। 19वी शताब्दी

मे बंगाल में राजा राम मोहन राय के प्रयास से ब्रम्ह समाज की स्थापना हुई वही दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की इन दोनो समाजो का उद्देश्य जातिव्यवस्था को जड़ से उखाड़ फेकना था।

20 वी शताब्दी में हमे 1947 में स्वतंत्रा हासिल हुई और उसके बाद हम देखते है कि औद्योगिकरण, शहरीकरण, आधुनिकरण, स्त्री शिक्षा, तकनीकि शिक्षा तथा नये नये वैधानिक नियम आदि ऐसे महत्वपूर्ण कारक है, जिन्हो ने जाति व्यवस्था मे अनेक परिवर्तन लाये है।

स्पष्टतः भारतीय इतिहास गवाह है कि जाति वयवस्था अपने प्रादुभार्व के समय से ही गहरे आघातो को झेल रही है और आज भी आधुनिक कारको के प्रभाव के चलते यह अपनी महत्वपूर्ण परम्पशगत विशेषताओ को खो रही है। जैसे अब हिन्दु समाज मे ब्राहमणो की सर्वोच्च सता नही रही, पदस्थिति का निर्धारण अब अ जन्म के आधार पर नही बल्कि कर्म के आधार पर होने लगा है। व्यवसाय के क्षेत्र मे आज लोगो को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त है और खान-पान, वेश-भूषा, छुआ-छूत संबंधी सारे निषेध बड़ी तेजी से टूट रहे है। विवाह सबंधी नियमो मे भी ढीलापन आ रहा है। प्रेम विवाह और अन्तर्जातीय विवाह के फलस्वरूप अन्तर्विवाह की विशेषता भी धीरे-धीरे घट रही है। जाति पंचायत भी समाप्त हो चुके है। इस प्रकार जाति व्यवस्था अपनी समस्त परम्परागत विशेषताओ को खो रही है।

एम. एन. श्रीनिवास ने संस्कृतिकरण एवं पाश्चिमीकरण के माध्यम से भारतीय समाज के गतिशील पहलू का विश्लेषण करने का प्रयास किया है। इनके अनुसार संस्कृतिकरण की प्रक्रिया द्वारा कई निम्न जातियों ने अपनी जातीय पदस्थिति मे परिवर्तन लाया है। उत्तर प्रदेश में नोनिया, गुजरात मे कुनबी बिहार मे अहीर इन जातियों में संस्कृतिकरण के माध्यम से अपनी जातीय पद स्थिति उच्च बना ली है। इतना ही नहीं श्रीनिवास का कहना है कि औद्योगीकरण एव शहरीकरण ने जाति को बड़े पैमाने पर संगठित होने मे मदद दिया है और जहाँ ग्रामस्तर पर जाति पंचायत होते थे वहीं अब राज्य स्तर पर जाति की महासभाएँ होने लगी है। पाश्चिमीकरण प्रक्रिया ने जाति के परंपरागत मूल्यों को तोड़ने में सक्रिय भूमिका अदा की है।

Y.B. Damle एवं एडमण्ड लीच आदि विद्वानों ने भी इस बात की चर्चा की है कि जाति व्यवस्था में निरन्तर परिवर्तन हो रही है। पर यह परिवर्तन संस्कृतिकरण के आधार पर नहीं बल्कि संदर्भ समूह सिद्धान्त के आधार पर हो रहा है। दामले के आगरा के क्षेत्रीय धनात्मक संदर्भ समूह है और ब्राह्मण ऋणात्मक संदर्भ समूह जाट के अनुसार ब्राह्मण कट्टरवादी एवं बाह्य आडम्बर वाले होते है अब वे ब्राह्मणों से दूरी बरतना चाहते है और क्षत्रियो को मेहनती एवं परिश्रमी मान कर उनके समकक्ष आने का प्रयास करते है। स्पष्टतः जाति व्यवस्था

मे परिवर्तन होते रहे है।

यद्यपि आज यह स्पष्ट हो चुका है कि मध्यम जातियो और निम्न जातियो को जो संवैधानिक सुरक्षाएँ दी गयी है, उसके चलते संस्कृतिकरण की प्रक्रिया अवरूद्ध हो गयी है लोग कम से कम जाति के हिसाब से वही रहना चाहते है जहाँ इनका जन्म हुआ है ताकि वे आरक्षण के सभी लाभो से लाभान्वित हो सके परन्तु इसका अर्थ यह नही है कि जाति व्यवस्था मे परिवर्तन रूक गया है दरअसल जातिव्यवस्था मे परिवर्तन का एक दूसरा स्वरूप उभर कर सामने आया है। आन्द्रे बेतेई का कहना है कि भारत मे जातिव्यवस्था का सामाजिक पक्ष तो गौण होता जा रहा है पर इसका राजनीतिक पक्ष बड़े ही अग्ररूप मे उभरकर सामने आया है। इनके अनुसार यह सही है कि जाति सामाजिक धरातल पर अपनी महत्वपूर्ण विशेषताओ को खो रही है पर राजनीतिक धरातल पर जाति को बड़े पैमाने पर संगठित किया जा रहा है। बेतेई का कहना है कि आज भारत की पूरी राजनीति जाति के इर्द-गिर्द चक्कर काट रही है जिसने जातीयता को उभार कर जाति को बड़े पैमाने पर राजनीतिक उद्देश्यो की पूर्ति के लिए संगठित देने मे मदद किया है। एम. एन. श्री निवास का भी कहना है कि राज्य स्तर पर जो भी मंत्रीमुय है उनमे मंत्री प्राय: अपनी - अपनी जाति के नेता होते स्पष्टत: श्री निवास एवं बेतेई के अनुसार जाति व्यवस्था परिवर्तन जरूर हो रहे है।

पर भारत से जाति व्यवस्था समाप्त नहीं होगी, बल्कि इसकी जड़े भारत मे और गहरी होती जा रही है।

ए. आर. देशाई का कहना है कि आधुनिक कारको के प्रभाव के चलते जाति व्यवस्था मे परिवर्तन जरूर हो रहे है पर भारतीय समाज कृषि पर आधारित समाज है और यहाँ भूमि - सम्बन्ध अन्य सारे संबंधो को निर्धारित करता है, अत: देसाई का कहना है कि जब तक भूमि सुधार कार्यक्रम को सही ढंग से लागू कर इस देश मे भूमि का समान्य वितरण नहीं किया जाता तब तक जाति व्यवस्था समान्य नहीं हो सकती है। इनका साफ शब्दो मे कहना है कि जब तक आर्थिक असमानता रहेगी तब तक सामाजिक समानता नहीं आ सकती है। चूँकि देशाई मार्क्सवादी है, अत: उन्होने जाति की समाप्ति को आधुनिक कारको से जोड़ कर देखा है। इनका साफ शब्दो मे कहना है कि यदि भूमि का समान वितरण होता है तो जातिव्यवस्था का स्थान वर्ग व्यवस्था लेगी।

इन विचारो से हटकर अलग विचार योगेन्द्र सिंह रजनी कोठारी आदि विद्वानो ने प्रस्तुत किया है। इन लोगो के अनुसार आधुनिक कारको के फलस्वरूप जाति व्यवस्था अपनी मौलिक विशेषताओ को खो रही है पर साथ ही इसमे वर्गीय चरित्र उभर रहे है। इन विद्वानो का कहना है कि ऐसा नहीं है कि एक दिन जाति व्यवस्था समाप्त हो जायेगी और उसकी जगह वर्ग

व्यवस्था लेगी बल्कि हकीकत यह है कि जाति के भीतर ही वर्गीय चरित्र उभर रहे है और संरचनात्मक अनुकूलता के तहत यह परिवर्तन जारी है।

उपरोक्त सभी चर्चाओ के आधार पर निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि जाति व्यवस्था में हमेशा से परिवर्तन की गति तेज हो गयी है, लेकिन इन परिवर्तनो के फल-स्वरूप जाति व्यवस्था भविष्य मे कौन सा स्वरूप ग्रहण करेगी इसके संबंध में समाज शास्त्रियों मे मतैक्यता नही है। साराशतः हम कह सकते है कि आज भारत मे जाति अपने परंपरागत स्वरूप मे नही है, इसने आधुनिक स्वरूप ग्रहण कर लिया है। राजनीति मे जाति की बढ़ती भूमिका ने जाति को नये स्वरूप मे हमारे सामने ला कर खड़ा कर दिया है।